प्रो० डॉ० लाल कौशल सिंह
अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, बी०ए० पार्ट-I दिनांक 03.07.21
कि० सि० म० महाविद्यालय औरंगाबाद समय 11.30-12.15

विषय: कबीर की भक्ति भावना का शेष भाग

वह राई को पर्वत एवं पर्वत को राई करने भी सामर्थ्य रखता है, यथा —

"साँई सूं सब होत है बन्दे थै कछु नांहि।
राई थै परबत करै, परबत राई मांहि॥"

कबीर यह स्वीकारते हैं कि मानव परमात्मा की कृपा से ही कुछ कर सकने योग्य बनता है। कबीर को 'कबीर' बनाने वाला भी वही है —

"ना किछु किया न करि सकया, ना करणै जोग सरीर
जे किछु किया सो हरि किया, तायैं भया कबीर कबीर॥"

कबीर का यह ईश्वर विश्वास उनकी भक्ति का एक प्रमुख अंग है।

(5) वैराग्य भावना :→ जो भक्ति चाहता है, उसे संसार के प्रति विरक्त भाव अपने मन में जगाना आवश्यक है। वैराग्य का तात्पर्य संसार को छोड़कर जंगल में निवास करना नहीं है। संसार में रहते हुए भी मन में संतोष वृत्ति लाना, विषय-भोगों के प्रति अनासक्त होना, आशा-तृष्णा से मुक्त होना ही वैराग्य है। जब भक्त भगवान की ओर उन्मुख हो जाता है तो सांसारिक विषयों के प्रति विरक्ति स्वतः जाग्रत हो जाती है। कबीर की मान्यता है कि आशा और तृष्णा जन्म-जन्मान्तर तक पीछा करती रहती हैं →

"माया मरी न मन मुआ मरि-मरि जात सरीर।
आसा त्रिस्ना ना मरी सौ कहि गए दास कबीर।।"

कबीर संसार के रिश्ते-नातों को क्षणभंगुर मानते हैं। ये सारे सम्बन्ध स्वार्थमय हैं ऐसा कहकर कबीर वैराग्य जगाने का प्रयास करते हैं।

(6) माधुर्य भाव की भक्ति → माधुर्य भाव की भक्ति को मधुरा भक्ति या प्रेम लक्षणा भक्ति कहा जाता है। भक्त स्वयं को जीवात्मा एवं भगवान को परमात्मा मानकर दाम्पत्य प्रेम की अभिव्यक्ति जहाँ करता है वहाँ मधुरा भक्ति मानी जाती है। जीवात्मा परमात्मा के विरह का अनुभव करती हुई उससे मिलन की आकांक्षा करती है। कबीर की आत्मा रूपी सुन्दरी बार-बार 'हरि' को अपना 'प्रियतम' मानती हुई कहती कि 'हरि' के बिना मैं रह नहीं सकती →

'हरि मेरा पीव हरि मेरा पीव।
हरि बिन रहि न सकै मेरा जीव।।"

आत्मा-परमात्मा के मिलन के आनन्द का वर्णन भी कबीर ने विवाह के सांगरूपक द्वारा किया है →

"दुलहिनि गावहु मंगलचार
मोरे घर आए हो राजा राम भरतार।।

आत्मा और जीवात्मा के प्रति विरह भाव कबीर ने बड़े मनोयोग से व्यक्त किया है।

प्रियतम परमात्मा की बाट जोहते-जोहते आंखों में झांई पड़ गई; राम को पुकारते हुए जीभ में छाला पड़ गया →

"आँखड़ियां झांई पड़ी पंथ निहारि-निहारि।
जीभड़ियां छाला पड़या राम पुकारि पुकारि॥

(7) दास्य-भाव की भक्ति → तुलसी की भक्ति जिस प्रकार दास्य भाव की है, उसी प्रकार कबीर की भक्ति भावना में भी दास्य भाव दिखाई पड़ता है। वे प्रभु को स्वामी एवं स्वयं को 'दास' सेवक या गुलाम कहते हैं। यथा—

(i) मैं गुलाम मोहि बेचि गोसाईं
(ii) जो सुख प्रभु गोविंद की सेवा, सो सुख राज न लहियो
(iii) दास कबीर भजि सारंग पान, देहु अभय पद मांगौ दान॥

कबीर भले ही निर्गुण मार्गी भक्त कवि हों, किंतु उनमें दास्य भाव की भक्ति दिखाई देती है।

(8) नवधा भक्ति का स्वरूप → कबीर के काव्य में नवधा भक्ति के तत्व— श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद, सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य, आत्म निवेदन — भी उपलब्ध होते हैं। यहां कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

नाम स्मरण — राम जपौ जिय ऐसे ऐसे। ध्रुव प्रह्लाद जप्यौ हरि जैसे।

पाद सेवन — राम चरन मन भाए रे।

अर्चन — ऐसी आरती त्रिभुवन तारै। तेज पुंज तहं प्रान उतारैं॥

Scanned with CamScanner

वचन — बन्दे तौहि बंदिगी सौं काम। हरि बिन जानि और हराम ॥
दास्य — सो सेवक जो लाया सेव। तिनही पाये निरंजन देव।
आत्म निवेदन — जो है जाका भावता जदि तदि मिलसी आइ ॥
जाकौं तन मन सौंपिया सो कबहू छाड़ि न जाइ ॥

भक्त अपने सर्वस्व का समर्पण प्रभु के प्रति करता हुआ कामना हीन हो जाता है। उसे अपने लिए कोई आकांक्षा नहीं रहती। स्पष्ट है कि कबीर के काव्य में नवधा भक्ति के तत्व प्रचुरता से उपलब्ध होते हैं।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि कबीर एक सच्चे भक्त थे। वे भक्ति की महिमा गाते नहीं अघाते। भक्ति हीन जीवन को वे व्यर्थ बताते हैं ऐसा व्यक्ति बार-बार जन्म लेकर संसार में आता-जाता रहता है

"भगति हीन जीवन कछु नाहीं। उतपति परलै बहुरि समाहीं ॥"

वे मानव को समझाते हैं कि अभी समय है, इन्द्रियां ~~सि~~ शिथिल नहीं हुई है अत: भक्ति कर ले क्योंकि जब अन्त समय आएगा तब इन्द्रियाँ शिथिल हो जाएंगी और भक्ति नहीं हो पाएगी।

निश्चय ही कबीर एक उच्च कोटि के भक्त थे। ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा एवं विश्वास उनकी भक्ति भावना का प्रमुख तत्व माना जा सकता है।

Scanned with CamScanner